श्री राम

व्यावहारिक साधना

स्वामी रामानन्द

साधना कार्यालय

स्वामी रामानन्द साधना-धाम

कनखल (हरिद्वार)

मूल्य १-०० रुपया

व्यावहारिक साधना

प्रस्तावना

परम-पूज्य श्री स्वामी रामानन्द ने विभिन्न व्यवहारिक प्रसङ्गों पर जो अपने मौलिक विचार व्यक्त किए हैं, वे इसके पूर्व तीन पृथक् पुस्तिकाओं में— (१) 'साधकों के लिए' (२) 'दम्पति के लिए' (३) 'माता-पिता के प्रति'— लिपि-बद्ध हो चुके हैं। श्री स्वामी जी के दृष्टि-कोण से समुचित व्यवहार ही साधना है, संतुलित जीवन ही अध्यात्म है। उन्होंने दैनिक व्यवहार को आध्यात्मिक साधना में रूपान्तरित करने की प्रचेष्टा की है। यही कारण है कि स्वामी जो के साहित्य में हमें सर्वत्र लौकिक-पारलौकिक जीवन का समन्वय मिलता है।

पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखित जिन पुस्तिकाओं की हमने ऊपर चर्चा की है, उनमें कथित यथार्थताओं का हमारे नित्य के जीवन के व्यवहार से निकटतम सम्बन्ध है-- फिर चाहे वह व्यवहार माता-पिता के प्रति हो, पति-पत्नी के प्रति हो अथवा अन्यों से हो। इन तथ्यों में सुखी रहने की विधि है, जीवन की

कला है, अध्यात्म है। विचारैकत्व पर दृष्टि रखते हुए, हमने इन समस्त दैनिक व्यवहारों से सम्बन्धित सिद्धान्तों को एक स्थान पर ही "व्यावहारिक साधना" पुस्तिका में संकलित कर अपने प्रिय पाठकों के समक्ष उपस्थित करने का प्रयास किया है। आशा है यह पुस्तिका साधकों के जीवन में सौम्यता लाने में सहायक होगी।

इस नवीन संस्करण में यथा-सम्भव अशुद्धियों को दूर करने का प्रयत्न किया गया है।

श्री राम

साधकों के लिए

१—भगवान स्वयं ही विकास की विभिन्न श्रेणियों पर अनेक रूपों में प्रकट हो रहें हैं और भिन्न-भिन्न व्यवहार कर रहे हैं यदि हम यह समझने की चेष्टा करें कि दूसरे जो व्यवहार करते हैं वह वैसा क्यों करते हैं और हम उनके विकास-क्रम में उनकी सहायता करें, तो हम शीघ्र ही सब में भगवान को और सबको भगवान में पहिचानने लगेंगे।

[दूसरों का व्यवहार उनके गत अनुभवों पर निर्मित संस्कार तथा परिस्थिति की विशेषता पर निर्भर होता है। इन सीमाओं से सीमित हुए हम सभी व्यवहार करते हैं। दूसरे की जगह में अपने को रखकर सोचने से ही यह समझ में आता है कि दूसरे वैसा सोचते तथा करते क्योंकर हैं। ऐसा करने से क्रोध की सम्भावना दूर हो जाती है। जैसे डाक्टर रोग के कारण को जानता है और उसका इलाज करता है, रोगी पर क्रुद्ध नहीं होता वैसे ही हमें भी दूसरों पर क्रुद्ध न होकर, उनकी अच्छे होने के लिए सहायता करनी चाहिए।]

२—हमें अपने शब्दों तथा क्रियाओं के दूसरों पर होने वाले प्रभाव को तौलना चाहिए और दूसरे के शब्दों तथा क्रियाओं के दूसरों पर होने वाले प्रभाव को तौलना चाहिए और दूसरे के शब्दों तथा क्रियाओं की अपने में होने वाली प्रतिक्रिया को भी। दूसरों के व्यवहार से हम कभी निराश

न होंगे और न कभी उसकी शिकायत करेंगे। हम जो थोड़ा सा दूसरों के लिए कर सकते हैं करें और उसको सौभाग्य करके जानें। प्रत्याशा कभी मत रखियेगा। यदि ऊपर लिखा सा करेंगे तो आप प्रीति की तरंगों के प्रसार केन्द्र बन जायेंगे।

[इस तरह से जागरूक रह कर चलने से ही व्यक्ति अपने व्यवहार से नित्य प्रति नये-नये सबक सीख सकता है और अपनी कमियों को दूर कर सकता है। दूसरों से व्यवहार करने के लिए इसी तरह से अच्छे-अच्छे तरीके जाने जा सकते हैं। अन्धे की तरह व्यवहार करते जाने से व्यक्ति की उन्नति नहीं हो सकती। शिकायत करने से हमारी स्वार्थपरता ही प्रकट होती है और उसके फलस्वरूप दूसरा भी हमारे लिए शिकायत ढूँढता है। कमियों को देखने और उनका वर्णन करने से लोग सुधारे नही जाते, दुश्मन बनाये जाते हैं। आशा, निराशा को और फिर घृणा आदि को, तनातनी को लाने वाली होती है। अपने आपको व्यबहार में ठीक करना ही सबसे अधिक वांछित हैं।]

३. प्रत्येक स्त्री जगन्माता का पुण्य प्रतीक(निशान)है। उसी की गोद में हमेशा खेलने की लालसा रखिएगा। कल्पना करिए कि मैं बालक हूँ और जगन्माता की गोदी में हूँ। मन ही मन खूब झुक जाइये और सहर्ष मन ही मन चरण स्पर्श कीजिये। अपनी माता की, बहिन को तथा अन्य लोगों की स्मृति जगाइयेगा।

[काम की वासना से परे होने के लिए यह दृष्टिकोण सहायक है। इस मातृ-दृष्टि से हृदय बदल सकता है और "मां" की कृपा भी प्राप्त हो सकती है। स्त्रियों को पुरुषों में परमपिता पुरुषोत्तम को देखकर जैसे पिता के सम्मुख आदरमय भाव होता है वैसा प्रतीत करना चाहिये।]

४. दूसरों से प्रीति करनी, दूसरों को समझाना, दूसरों में भगवान को देखना और उनसे यथायोग्य व्यवहार करना, यह सबसे श्रेष्ठ सेवा है। ऐसा करने से आप अनजाने ही दूसरों को उठाते हैं और बिना कहे ही दूसरों की सहायता करते हैं। यह प्रभु की भी सेवा है और यह प्रभुमय जीवन भी है।

[प्रभुमय जीवन का ऐसा ही स्वरूप है। यही सेवा का भी ऊँचा भाव है। यही भागवत-विकास क्रम में योग देना भी है। ऐसा जीवन ही वास्तव में आनन्दमय होता है। इसी को पाने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए।]

५. प्रभु जो आपके लिये जिम्मेदारी लिए हैं, वही दूसरों के कल्याण के लिए भी जिम्मेदार हैं। जो भी हित वह आपके द्वारा करना चाहे उसके लिये सदा तैयार रहना चाहिये। परन्तु यह सोचना कि तुम किसी के भविष्य को स्वयं ढाल सकते हो, गुनाह है।

[व्यक्ति अपने बन्धु बान्धवों, इष्ट मित्रों के लिए जो कुछ भी हो सके भगवान का यन्त्र बनकर करे परन्तु उनके भविष्य के लिए चिन्ता न करे। प्रभु का हाथ सभी के सिर पर है। हमारे पर भी है और उन पर भी जिनको हम अपना समझते हैं।]

६. प्रभो! मुझे अपना सच्चा सेवक बना लो, मुझ अपना सच्चा पुत्र बना लो, मुझे अपना पूर्ण यन्त्र बना लो। प्रभो! मुझे आप पूरी तरह से अपना कर लो और अपने से एक कर लो, पूर्णरूपेण।

[यह प्रार्थना है। इन भावों को अपने हृदय में जागृत करिये।]

७. अपने को बदल डालने के लिए रामनाम से अधिक प्रभावकारी साधन को मैं नहीं जानता। जितना अधिक इसे जपा जाये और जितना इस पर निर्भर रहा जाए, उतनी ही जल्दी हम इसको अपने में परिवर्तन करता हुआ पायेंगे। कबीर जी ने कहा है :—

सभी रसायन हम करी, नाहिं नाम सम कोय।
रंचक घट में संचरै, सब तन कंचन होय॥

[नाम के प्रभाव के लिए देखियेगा आध्यात्मिक साधन भाग १]

८. सभी विचार जिससे कुछ प्रयोजन सिद्ध नहीं होता मानसिक शक्ति का अपव्यय है। मानसिक शक्ति का सर्वोत्तम उपयोग है नाम का स्मरण और उसके द्वारा प्रभु से युक्त हो जाना।

[हम प्रायः ऐसी बात सोचते रहते हैं जिससे कुछ भी हाथ नहीं लगता। उससे मस्तिष्क कमजोर होता है और विचार की शक्ति भी नष्ट होती चली जाती है। शरीर पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। नाम का स्मरण करने से न केवल ये विचार दूर हो जाते हैं। अपितु भगवान की समीपता भी प्रतीत होती है। व्यक्ति घाटे से ही नहीं बचता, लाभ भी लेता है।]

९. अवाँछनीय विचारों, भावों और आदतों से छुट्टी पाने का उपाय है उनकी उपेक्षा करना और मन की शक्ति को धनात्मक दिशा में लगा देना—नाम स्मरण करना, आत्म-चिन्तन करना, और जिन गुणों को व्यक्ति अपने में लाना चाहता हो उनका चिन्तन करना। जब भी वैसी अवाँछनीय बात घट जाये तो अपने में विश्वास जागृत करे कि वह प्रवृत्ति धीरे-धीरे अवश्य नष्ट हो जाएगी। अतः इसकी चिंता नहीं करनो चाहिए। अधीर कदापि मत होइयेगा। स्वभाव में बल होता है। जैसे चलती हुई गाड़ी एक दम से खड़ो नहीं हो सकती, इसी प्रकार से स्वभाव भी एक दम से नहीं बदलता।

[प्रायः लोग निराश होते हैं। अपने को कोसने लगते हैं। आत्म विश्वास खो बैठते हैं और फिर सफलता असम्भव हो जाती है। आत्म परिवर्तन के क्षेत्र में आत्मविश्वास सबसे अधिक आवश्यक है और वह ऊपर लिखे तरीके से पैदा किया जा सकता है।]

आत्म-चिन्तन

१०. मैं शक्तिमय, ज्ञानमय, आनन्दमय तथा मंगलमय हूँ राम अनन्त शक्तिमय, अनन्त ज्ञानमय, अनन्त आनन्दमय तथा परम मंगलमय हैं!! मैं राममय हूँ--मैं अमृतमय हूं !!!

११. वास्तव में राम सभी रूपों में प्रकट हो रहा है और यह सब कुछ उसके संकल्प की लीला है। वह हमारे हित को हमसे अधिक जानता है और उसे कर भी सकता है। अतः मुझे अपने को उसके साथ जोड़ लेना चाहिए' उसकी इच्छा को पहचानने की चेष्टा करनी चाहिए तथा अपनी इच्छा को उसकी इच्छा में समर्पित कर देना चाहिए, प्रभो ! तेरी इच्छा पूर्ण हो।

[यही समर्पण का मौलिक विचार है। ऐसा समझ लेना समर्पण के लिए आवश्यक है। इसके बिना समर्पण नहीं हो सकता।]

दम्पति के लिए

दो शब्द

एक बहिन के विवाह के अवसर पर उसके लिए एक पत्र लिखा गया था। वह पत्र सभी दम्पतियों के लिए, भले ही उन्हे गार्हस्थ्य में प्रवेश किए कितना समय हो गया हो, उपयोगी है। नये प्रविष्ट होने वालों के लिये तो बहुत हितकर हो सकता है। अतः थोड़ा सा परिवर्तन करके प्रकाशित किया जाता है।

विवाह के अवसर पर वर-वधु के हाथों में रखने योग्य वस्तु है।

पति-पत्नी के परस्पर शारीरिक सम्बन्ध तथा सन्तति उत्पादन के विषय में जानकारी के लिये तो लेखक की पुस्तक 'जीवन रहस्य' देखनी चाहिए। वह एक समुचित दृष्टिकोण के निर्माण में सहायक होगी।

—रामानन्द

एम-५, जवाहर क्वार्टरज
मेरठ
८-२-५१

श्री राम

रामकुटी,
पीलीभीत।
१०-१-५१

बहिन.....

प्यार और आशीर्वाद

तुम जीवन के नये प्रहर में प्रवेश करने जा रही हो। विवाह जीवन की विशेष महत्वपूर्ण घटना है। बचपन का अन्त होता है, देनदारी का उदय होता है। युवा कन्धों पर आता है नये संसार को बनाने का भार। अपने को नये ढाँचे में ढालने की माँग होती है अप्रौढ़ यौवन से। इस अवसर पर यदि मैं कुछ उपयोगी बातें तुम्हारे सामने रख सकूँ तो सम्भव है तुम्हारा आगामी जीवन अधिक मंगलमय हो सके।

पहिला प्रश्न है—इस महान परिवर्तन को कैसे स्वीकार किया जाये?

इसे बन्धन समझोगी तो यह वास्तव में बन्धन ही हो जायेगा। रस्सी की तरह चुभने लगेगा। और छूट भागने की छटपटाहट होगी। पर वैसा समझना तो गलती है। मेरी समझ में तो वह नास्तिकता का परिणाम है। प्रभु में अविश्वास और निर्भरता के अभाव का सूचक है।

विवाह तो मंगलमयी माँ महाशक्ति का दयामय देवाधिदेव का मंगलमय विधान है। मानव विकास के लिये आवश्यक सीढ़ी है। इसके द्वारा मंजता है व्यक्ति। निर्मल और उज्जवल होता है। यह तो साधना है, योग है, जिम्मेदारी कन्धों पर पड़ती है, तो व्यक्ति जिम्मेदार बनता है। संघर्ष होता है और व्यक्ति, मंज जाता है। विवाह तो व्यक्ति को विकास क्रम में आगे ले जाने के लिए मंगलमय देव का दयामय विधान है।

और, क्या-क्या पाठ पढ़े जाते हैं इसके द्वारा? तुम पूछोगी बहिन।

सबसे बड़ा पाठ जो पढ़ा जा सकता है वह है अपने को मिटा देने का। पत्नी पति में अपने को मिटा देना सीखती है बच्चों में अपना आपा खो देना सीखती है। अपनेपन को खो कर ही वह नये परिवार का एक सजीव अंग बन जाती है। जितना कोई आपा खो सकता है उतना ही भागवती भाव उसमें प्रकट होता है। उतना ही वह प्रभू का हो सकता है। आपा ही तो बड़ा बन्धन है। जितना कोई मिट सकता है, उतना ही खिल जाता है और खुल जाता है, फलता और फूलता है। बीज गल कर विकास को पाता है, ठीक वैसे ही।

आपा खोना – अहंभाव से ऊपर उठना – अध्यात्म की ऊंची घाटी है। सती साध्वी स्त्री इस पाठ को घर में पढ़ सकती है। ईमानदार पति भी इस पाठ को गृहस्थ में पढ़

सकता है। कैसा अमूल्य अवसर है इस महान् पाठ को पढ़ने का।

कैसे मिटाया जाता है आपा? अपनी रुचियों और चाहों का त्याग करके। अपने सुख की परवाह न करके। यह त्याग पति तथा पत्नी दोनों को ही उज्ज्वल कर देता है।

यही त्याग सेवा होती है। सेवा तो मनोवृत्ति है। दूसरों के लिए उपयोगी होने की सच्ची क्रियाशील भावना है। सेवा करके स्वार्थपरता दूर की जाती है। निःस्वार्थ हुआ जाता है। यज्ञमय हुआ जाता है। यज्ञमय पुरुषोत्तम का प्रत्यक्ष पूजन होती है सेवा।

और, पढ़ा जाता है प्रेम का मधुर पाठ। बिना प्रेम के तो मनुष्य मनुष्य नहीं होता, सूखा ठूँठ होता है। और बिना प्रेम के प्रभु का द्वार भी तो नहीं खुलता। गृहस्थ जीवन में दिल पिघलना सीखता हैं। घर वालों के लिए पिघलना सीख कर वह प्रभु के लिए भी पिघल सकता है। पड़ोसी के लिए भी पिघल सकता है। परन्तु बिना पिघलना सीखे तो वह पिघलता ही नहीं, वह जग ही नहीं सकता।

प्यार देना, प्यार कर सकना, सुखी रहने का सार है। पति को पत्नी, और पत्नी को पति प्यार सहज में ही दे पाता है। बच्चों को भी स्वभाव से ही प्यार दिया जाता है। मातृत्व और पितृत्व का सौभाग्य मिलता है। उस महान् मातृ-पितृ शक्ति का अवतरण होता है। वह महा-शक्ति का

भाव और परमपिता का भाव उतरता है लौकिक माँ और बाप में। वह ऊंचा कर देता है।

तुम कहोगी यह पाठ तो ऊँचे हैं, परन्तु इस प्रेम में बन्धन होता है, मोह होता है। व्यक्ति ममता-मोह के माया जाल में फंस जाता है और दुःखी होता। आसक्तियाँ पैदा हो जाती हैं।

तुम्हारा कहना ठीक है, परन्तु इन आसक्तियों की जागृति होने पर ही तो व्यक्ति उनसे छूट सकता हैं। वे जब प्रकट नहीं होती तब भी तो हमारे भीतर रहती हैं। आसक्ति तो चिपकने की योग्यता है। अवसर होने पर जग जाती है। वैवाहिक जीवन में ममता-मोह प्रकट हो जाता है। होता तो वह पहिले से ही है। जब वह प्रकट होता है तो उसका क्षय भी हो सकता है। रोग प्रकट हो तभी तो उसका इलाज होता है।

ममता-मोह का, आसक्ति का इलाज है समर्पण। यह सब कुछ प्रभु का ही तो है। हम अपना समझ बैठते हैं। इसी लिये तो बन्धते हैं। उसकी चोजों को उसी के अर्पण कर देना होगा। सभी कुछ उसी का समझना होगा। बाल-बच्चों को, पति को और घर-बाहर को भी उसी का समझ कर बरतना होगा। उसी का समझ कर उसी की सेवा समझते हुए सभी काम करना होगा। सभी जिम्मेदारियाँ तो प्रभु की ही हैं, हम तो उसके 'हुक्म के बन्दे'--निर्देश का पालन करने वाले हैं केवल मात्र। वैवाहिक जीवन में यह निष्ठा भली-भांति

जगाई जा सकतो है। इस निष्ठा से कर्म करता हुआ व्यक्ति बन्धन रहित हो जाता है।

यह जीवन प्रभु की देन है। उसी के विधान से पति मिलता है। अतः पति भी प्रभु का है, उसी की देन है। बच्चे भी मालिक की देन होते हैं और उसी के होते हैं। जब हम सभी कुछ उसका समझते हैं तो ममता के लिए गुजाइश नहीं रहती। हमारी गलत दृष्टि हो परेशानी का कारण होती है।

मैं जानता हूं यह निष्ठा एक दम से पक्की नहीं हो जाती। घिस-घिस कर बनती है। समय लगता है। पर डरना क्यों? लक्ष्य सामने रखकर जीवन में प्रवेश करना होगा। विजय तो निश्चित ही है।

इस निष्ठा से जो पति की सेवा है वह प्रभु की पूजा हो जाती है। जो पत्नी के लिए पति करता है, वह भो प्रभु की सेवा होती है क्योंकि जैसे पत्नी के लिए पति है, वैसे ही तो पत्नी है पति के लिए। बच्चों का काम-काज भी प्रभु का ही काम-काज हो जाता है। वह तो जीते जागते ठाकुर जी हो जाते हैं। समूचा जीवन सजीव अर्चना हो जाती है उस यज्ञेश्वर भगवान की। यह गार्हस्थ्य माया जाल नहीं दीखता, आनन्दमयी यज्ञस्थली दीखतो है।

काम और क्रोध भो लाँघा जाता है इसी गार्हस्थ्य के विद्यालय में। यदि सुख के लिए गार्हस्थ्य किया जावे, तो

काम, क्रोध तथा लोभ के चक्कर में फंसता हो है। परन्तु सुख के लिये विवाह करना तो दःख को न्योता देना हैं। वैवाहिक जीवन में तो सुख भी आयेगा और दुःख भी। दोनों को प्रभु की देन समझ कर, कल्याण मार्ग के कदम समझ कर, विकास-पथ के पग जानकर, सहर्ष स्वीकार करना होगा। साधना समझकर ही गार्हस्थ्य में प्रवेश करना ठीक है। विकास का ही एक महान पाठ मान कर इसे पढ़ना चाहिए। कर्तव्य को और पूजन की भावना ही इसमें प्रधान रहनी चाहिए। तब दुःख से व्यथा न होगी। सुख पांवों को न हिला पावेगा।

यह सभी सम्भव है दृढ़ता और धैर्य से चलते चले जाने से। यह सभी हो पायेगा, यदि जीवन में पल-पल मगलमयी माँ का आवाहन करोगी, यदि सभी कामों में उसे अपने आगे रखने की चेष्टा करोगो तो।

अब रह जाती हैं व्यवहार की बातें :--

१. आपस में किसी प्रकार का भी दुराव नहीं रखना चाहिए। सत्यता और सच्चाई इस पवित्र नाते की आधार शिला है। इसी आधार पर त्याग के द्वारा प्यार का भवन खड़ा होता है।

२. दूसरा व्यक्ति जो भी है, और जैसा भी है उसे स्वीकार करना है। उसकी कमियों सहित ही उसे स्वीकार करना होगा। हमें प्यार देना है, क्योंकि दूसरा हमारा है।

इस लिये नहीं कि वह गुणवान है या रूपवान है इस लिए भी नहीं कि वह धनवान या यशस्वी है, वह हमारा है इतना ही पर्याप्त है। यही ऊँचे प्रेम का ठीक प्रेरक है।

३. जीवन में सुखी रहने का तरीका है, दूसरों को सुखी करने की चेष्टा करना। दुःखी होने के लिए अपने सुख की चिन्ता ही काफी है। ऐसा करने से, न केवल हम ही दुःखी होंगे, दूसरों को भी दुःखी करेंगे। एक दूसरे को अधिकाधिक सुखी रखने की चेष्टा सौम्य गृहस्थ का नियम होता है।

४. दूसरे के सुख को उसी के पैमाने से आँकना चाहिये अपने से नहीं। दूसरे की भावनाओं और रुचियों को बिना समझे हम अनजाने ही उसके लिये परेशानी का कारण हो सकते हैं, सुख पहुँचाना तो दूर रहा। इस विषय में खूब सजग रहना चाहिये। बहुधा हम अपनी रुचियों को दूसरे पर लाद कर उसे परेशान करते हैं।

५. हम अपनी उदार भावना और विशाल सहानुभूति के द्वारा ही दूसरे को ठीक समझ सकते हैं, और उसके लिये उपयोगी हो सकते हैं। भरसक यत्न करना चाहिए एक दूसरे को ठीक-ठीक समझने का।

६. एक दूसरे को उन सभी बातों में स्वतंत्रता देनी चाहिये जिन बातों की स्वतंत्रता गृहस्थ की एकाई को, समष्टि जीवन को ही उच्छिन्न न करती हो। स्वतंत्रता में वास्तविक प्रीति संभव है, स्वतंत्रता में ही विकास संभव है।

अपने विचारों और आचारों को ही ठीक समझकर एक दूसरे पर लादने का परिणाम घोर होता है। इसमें व्यक्तित्व का हनन होता है। दिल कुचले जाते हैं। भीतर ही भीतर प्रतिरोध की भावना जगती है, संघर्ष होने लगता है।

वह बातें जो गणनीय नहीं हैं, उनमें एक दूसरे के आगे झुकना ही उचित है।

७. एक दूसरे का विश्वास जिम्मेदारी की भावना जागृत करता है। वह पवित्र रख सकता है, और ऊँचा उठाता है। बिना पारस्परिक विश्वास के गृहस्थ नरक हो जाता है।

८. एक दूसरे के क्षणिक सुख की अपेक्षा हित अधिक मूल्य रखता है। परन्तु बलात्कार, जो दूसरे के हित के लिये भी किया जाता है, वह गलत है। उसका परिणाम कटुता ही होगी।

९. मधुरता, त्याग और दृढ़ता गार्हस्थ्य जीवन की घोरतम-समस्याओं को हल कर सकते हैं।

१०. आँधियाँ गार्हस्थ्य जीवन का नियम है। उनसे घबराना गार्हस्थ्य जीवन के वास्तविक रूप को न जानना है। आँधियाँ हमें प्रभु के समीप कर देती हैं। उसका सहारा लेना सिखाती है। उन्हीं से गम्भीरता और समता का पाठ पढ़ा जाता है।

११. मुख मण्डल पर मधुर-मुस्कान, मुख से प्रेम भरी वाणों, और प्यार भरे हृदय में गूँजता हुआ 'राम-नाम' मिल कर किसी भी गृहस्थ को आनन्दमय बना सकते हैं ; इनका अभ्यास करना ।

मैं इस नाते को आध्यात्मिक मित्रता समझता हूँ । यह पति-पत्नी का नाता शारीरिक ही नहीं, मानसिक ही नहीं, आध्यात्मिक भो होता है । एक दूसरे से बन्ध जाते हैं दोनों, विकास के एक सूत्र में ।

परस्पर समानता को भावना सहज होती है मित्रता में, एक दूसरे का सुख और उससे भी अधिक हित प्रिय होना चाहिये समझदार मित्रों में । सच्चाई और प्रेम के सूत्रों में बन्धे रहते हैं वे परस्पर । यह भी इस नाते पर लागू होता है ।

इन बातों को समझना, स्मरण रखना, और जीवन में उतारने की चेष्टा करना, बहिन ! मैं समझता हूँ इनसे तुम्हारा हित होगा ।

मेरी मंगल कामनायें तो सदैव तुम्हारे साथ हो हैं ।

तुम्हारा वीर,
रामानन्द ।

माता पिता के प्रति

बच्चों के साथ बरतने में बड़ी कुशलता तथा उदारता की आवश्यकता होती है अन्यथा हम उन्हे तथा अपने को बहुत हानि पहुँचा सकते हैं। एक तो हमें इस बात को कभी न भूलना चाहिये कि बच्चे बच्चे ही है, जिस प्रकार हम स्वयं कभी थे। वे वैसे नहीं हैं जैसे कि हम इस समय हैं। उनकी बुद्धि तथा अनुभव सीमित होते हैं। अतःएव हमें उनसे बहुत अधिक आशा न रखनी चाहिये। जैसे-जैसे उनकी बुद्धि का विकास होगा, वे बस्तुओं को भिन्न प्रकार से समझने लगेंगे।

दूसरे चरित्र निर्माण में आत्म-सम्मान का भाव एक बहुत बड़ी निधि है, अतःएव उसे कभी भी ठेस न पहुँचनी चाहिये। दूसरों के सम्मुख बच्चे की बुराई करने से उसके आत्म-सम्मान को चोट पहुँचती है। यह विद्रोह का कारण होता है। परिणाम स्वरूप धीरे-धीरे बच्चे तथा माता-पिता के मध्य बहुत बड़ा अन्तर उत्पन्न हो जाता है। किसी प्रकार का प्रभाव डालना फिर सम्भव नहीं रहता। शान्त अनुरोध द्वारा तथा अपने में विश्वास उत्पन्न करके कोई भी दूसरों के चरित्र-निर्माण में सहायता कर सकता है। किन्तु डांट-फटकार द्वारा अथवा तिरस्कार से यह कभी भी सम्भव नहीं

है। जब भी हम बालक पर(अथवा अपने से किसी छोटे पर) प्रभाव डालना चाहते हैं तो हमें उसे एकान्त में ले जाना चाहिये और शान्ति एवम धैर्यपूर्वक बहुत ही मृदुल एवम स्नेहपूर्ण रीति से वह बात उस पर प्रकट करनी चाहिये ताकि वह उचित रूप से प्रभावित हो सके। किसी भी बालक का दूसरों के सम्मुख कभी सी अपमान करना उचित नहीं है। अप्रिय सत्य छिपाना ही पड़ता है।

तीसरे बालक पर कठोर रोक उसके विकास के लिये हानिकारक हे। इस प्रकार की रोक से वे सदैव बालक ही बने रहते हैं। निश्चित सीमा के अन्दर जिसमें वे अपने को विशेष हानि न पहुँचा सकें उन्हें अपनी भूलों द्वारा सोखने की स्वतन्त्रत। होनी ही चाहिये। जव तक वे अच्छाई तथा वुराई भली भांति समझने न लग जावें उन्हें थोड़ी बहुत स्वाधीनता देना तथा उनकी विचारशक्ति को प्रोत्साहित करना उनके लिये हितकर है। "स्नेह" ही `सी वस्तु है जो बालक को सुरक्षा की दृष्टि से महत्व रखती है और वह बहुत कुछ हमारे द्वारा उनके प्रति किये गये व्यवहार पर निर्भर है। यदि हम उनके प्रति उदार हैं तो वे हमारे प्रति उदार रहेंगे यदि हम उनकी भावना का विचार न रखेंगे तो वे भी हमारी भावना की परवाह न करेंगे। बड़े बच्चों से तो बहुत ही खुलकर बातें कर लेने का निश्चिय कर लेना चाहिये यह समस्त वातावरण को हो बदल देगा। उन्हें अपने बिचारों पर बरबस बाध्य करने की अपेक्षा यह

ज्यादा अच्छा होगा कि उनमें उन विचारों की खूबी का समझने की योग्यता उत्पन्न कर दी जावे अन्यथा उनमें चोरी करने की, अपने विचारों को छिपाने की आदत पड़ जायेगी।

चौथी बात जो विशेष महत्व की है यह है कि किसी बात पर प्रतिबन्ध लगाने से पूर्व या किसी माँग को अस्वीकार करने के पूर्व हमें भली भांति विचार कर लेना चाहिये। हमारी कल्पना ही इसका एक मात्र कारण न होना चाहिये। बच्चे का हित तथा अपनी सीमाओं से ही इसका निर्णय करना चाहिये, किन्तु एक बार जब हम 'ना' कहें हमें उस पर दृढ़ कहना चाहिये। बालक का कितना ही रोना या मचलना या क्रोधित होना हमें अपने निश्चय से पीछे हटाने में समर्थ न होना चाहिये। बालक को एकान्त में छोड़ देना चाहिये। कभी भी क्रुद्ध न होना चाहिये, वह शीघ्र ही सीख लेगा कि क्रोधित होना अथवा मचलना निरर्थक है। किन्तु और बातों में हमें और अधिक विचारशील होना चाहिये।

उस समस्त भौतिक सम्पत्ति की अपेक्षा जो हम बालक को दे सकते हैं चरित्र एवं शिक्षा बालक के लिये बहुत अधिक उपयोगी निधि है। बालक यदि यह सोच ले कि बिना कुछ किये ही उसके जीवन यापन के लिये उसके पास पर्याप्त है तो यह उसके लिये सबसे बड़े दुर्भाग्य की बात होगी अच्छी आदतें, अच्छे व्यवहार, श्रम के प्रति स्नेह सरलता एवम सच्चाई, आदि द्वारा चरित्र का निर्माण होता है।

तुम्हारा निजी उदाहरण अन्य वस्तुओं की अपेक्षा बच्चों को सबसे अधिक प्रभावित करेगा। स्कूल के कार्य के अतिरिक्त, बालक से अन्य कार्य भी कराये जाने चाहिए। उसे स्वयं अपनी तथा अपने से छोटों की सहायता करनी चाहिये। नौकर रख सकने में समर्थ होते हुए भी चरित्र निर्माण के लिये ऐसा करना आवश्यक है। बच्चों को सीमा से अधिक दुलारना तथा उसकी परवाह करना उसके लिये दुःखद भविष्य का निर्माण करना है। इससे बुरी आदतों का निर्माण होगा और भावी जीवन में इसका परिणाम स्पष्ट ही है। जीवन गुलाब के पुष्पों की शय्या नहीं हैं। उसके आघातों को सहने के लिये वे बहुत ही अधिक कोमल रहेंगे।

कभी-कभी दण्ड देना भी आवश्यक हो जाता है। जहाँ तक हो सके उसको प्रयोग में न लाना चाहिये तथा अन्य साधन काम में लाना चाहिये। किन्तु यदि असम्भव हो तो दण्ड अवश्य देना चाहिये परन्तु वह नित्य की वस्तु न हो, अन्यथा बालक के हृदय में हमारे प्रति आदर और स्नेह न रह जायेगा और फिर हम उसके विकास को प्रभावित न कर सकेंगे। बालक में विद्रोह की भावना को कभी पुष्ट न करना चाहिये। यथा शीघ्र इसे दूर करने का यत्न करना चाहिये।

विश्वास एवम् व्यावहारिक आदर्शवाद की नींव बचपन में ही डाल देनी चाहिये। इसके लिए घर में उपयुक्त

वातावरण नितांत आवश्यक है। महान् तथा दिव्य पुरुषों की जीवनियां इस दशा में बहुत कुछ सहायक हो सकती हैं। जहां तक हो सके बच्चों के प्रश्नों का उत्तर खुल कर देना चाहिए।

विकसित होते हुए बच्चों के लिए 'सेक्स' अर्थात् स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध एक समस्या है। इस विषय में उपयुक्त शिक्षा विशेषकर माता-पिता के द्वारा मिलनी चाहिये। पिता पुत्र की तथा माता पुत्री की, इस कठोर सत्य को समझने में सहायता कर सकते हैं। दुराव की कोई आवश्यकता नहीं है। इस पर बहुत सावधानी से बातचीत करनी चाहिए। यदि हम इस विषय का आवश्यक ज्ञान नहीं देगें तो बच्चे अन्य अनुचित स्थानों से उसका ज्ञान प्राप्त करेंगें, जिसके परिणाम स्वरूप स्थायी मनोवैज्ञानिक तथा शारीरिक हानि होने की सम्भावना है। कुछ अच्छी तथा सरल पुस्तकें उनके हाथ में रख देनी चाहिए और उपयुक्त अवस्था पर, अत्यन्त अनिवार्य बातों की सीमा के अन्दर स्पष्ट रीति से कह देना चाहिये।

बच्चों का उत्पादन खेल नहीं है। इसके कारण माता-पिता के ऊपर एक महान उत्तरदायित्व आ जाता है। बच्चों के पालन-पोषण सम्बन्धी ज्ञान उन्हें प्राप्त करना चाहिए और इस बात को दृष्टि में रखते हुए कि वे बच्चों को किस रुप में देखना चाहते हैं, उन्हें अपनी आदतों में भी परिवर्तन करना होगा।

आदि से अन्त तक निरीक्षण अनिवार्य है। इस बात को भी ध्यान पूर्वक देखना चाहिये कि हमारे व्यवहार का उन पर क्या प्रभाव पड़ता है। और जो अनुभव हमें होते हैं उनके अनुसार उनमें परिवर्तन करते रहना चाहिए।

बालकों में ईश्वर निहित है। कौन कह सकता है कि जब वे हमारी तरह बड़े हो जायेंगे वे किस ऊँचाई तक पहुँचगे। हम अपने पिता के कन्धों पर आसीन हैं वे हमारे। उसके भविष्य के प्रति तथा उस व्यक्तित्व के प्रति जो निरन्तर विकसित हो रहा है, हमारे हृदय में आदर का भाव होना चाहिए। इस प्रकार बच्चों के साथ व्यवहार करते समय हम आध्यात्मिक को प्रयोग में ला सकते हैं।

स्वामी रामानन्द जी
द्वारा रचित प्रकाशित साहित्य

हिन्दी साहित्य

नाम पुस्तक	नाम पुस्तक
१. आध्यात्मिक विकास	९. अशान्ति में
२. आध्यात्मिक साधन (प्रथम खण्ड)	१०. फूल पत्तियाँ
	११. गीता विमर्श
३. आध्यात्मिक साधन (दूसरा खण्ड)	१२. व्यावहारिक साधना
	१३. मेरे विचार
४. जीवन रहस्य	१४. मेरी दक्षिण-भारत यात्रा लेखिका : सुमित्रा 'माँ'
५. कैलाश दर्शन	
६. हमारी साधना	१५. स्वामी रामानन्द वचनामृत लेखक : श्री जगदीश प्रसाद द्विवेदी
७. हमारी उपासना	
८. साधना और व्यवहार	१६. स्वामी रामानन्द चरितसुधा

अंग्रेजी साहित्य

1. As I Understand.
2. Evolutionary Outlook on life
3. Evolutionary Spiritualism
4. Sex and Spirtuality (जीवन रहस्य का अंग्रेजी अनुवाद)
5. " " (Delux edition)
6. Our Worship

साहित्य मिलने का पता :—

मैनेजर, स्वामी रामानन्द साधना-धाम, सन्यास रोड,
कनखल (हरिद्वार)

प्रिंटैक्स, जे-६६, करतार नगर, दिल्ली-५३ Ph. 7111627